Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

वैदिकी-परम्परा

डॉ॰ जगतनारायण
माँ दुर्गानगर, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

सारांश

मानव जाति के बिना राष्ट्र की कल्पना करना असंभव है । क्योंकि राष्ट्र के उत्थान के लिए मानव जाति का कर्मशील होना अति अनिवार्य हैं । मानव के कर्म दर्शन को देखने के लिए हमें उसके प्राणों के दर्शनों की आवश्यकता है । मानव जीव का प्राण उसकी संस्कृति में बसता है । जिस प्रकार से शरीर आत्मा के बिना शवतुल्य होता है और उसी प्रकार संस्कृति के बिना समाज व राष्ट्र निष्प्राण होता है । संस्कृति किसी जिंदगी के किसी एक पहलु को नहीं कहा जा सकता । संस्कृति की आत्मा वेद है । क्योंकि संस्कृति शब्द जीवन के समग्र अभिव्यक्त को कहा जा सकता है । जीवन के मुख्य चार पुरुषार्थ बताए जाते हैं - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जिन को हम जीवन की आदर्श प्राप्ति मानते हैं । इन चारों पुरुषार्थो को पाने के लिए वेदों में मानव जीवन को चार आश्रमों की जीवन पद्धति प्रदान की ।समग्र जीवन को चार आश्रमों ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास की आदर्श शैली को अपनाकर व्यक्ति भूक्ति और मुक्ति दोनों ही अपने जीवन काल में प्राप्त कर सकता है । सामाजिक संस्कृति का सबसे विशिष्ट पहलू है प्रवृत्ति प्रधान कर्म योगात्मकदृष्टिकोण । कर्त्तव्य और कर्म से पूर्ण सांसारिक जीवन सबसे बड़ा आदर्श है ।

वेद भारतीय संस्कृति की आत्मा है। ये मानवजाति के लिए प्रकाश- स्तम्भ हैं । विश्व को संस्कृति का ज्ञान देने का श्रेय वेदों को है । वेद ही विश्व-शान्ति, विश्व-बन्धुत्व और विश्व-कल्याण के प्रथम उद्घोषक था। वेदों की ज्योति ने ही आर्यजाति की समुन्नति का मार्ग प्रशस्त किया था ।[1] शिक्षा के बिना संस्कृति अन्धी होती है व राष्ट्र लंगड़ा होता है । कोई भी राष्ट्र शिक्षा के बिना समृद्ध नहीं होता । इन्हीं दोषों को दूर करने के लिए संस्कृति की आत्मा कहे जाने वाले वेद मानव जाति के लिए प्रकाश स्तम्भ बनकर मानव जाति को दिशा प्रदान करते हैं । सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को संस्कृति का ज्ञान देने का श्रेय वेदों को जाता है । वेद ही विश्वशान्ति, विश्वबन्धुत्व और विश्वकल्याण के प्रथम उद्घोषक है ।महर्षि मनु जी ने तो यहां तक कहा है "सर्वज्ञानमयो हि स:" । उपनिषदों का मूल मंत्र है, "अहं ब्रह्मस्मि" और "तत्त्वमसि" भाव के आत्मा और ब्रह्म एक है । उपनिषदों का सार है, आत्मानं विद्धि अर्थात् आत्मा को जानो । मानव जीवन का ध्येय आत्म-सम्बन्धी साक्षात्कार है । इस ब्रह्माण्ड में अगर कोई जानने योग्य ज्ञान है तो वे आत्मज्ञान ही है । आत्मज्ञान से मनुष्य का रोग और शोक मिटता है । इस दृष्टिकोण को अपनाकर मानव अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है ।

वेद शब्द ज्ञानार्थक विद् धातु से घञ् प्रत्यय करने पर बनता है ।इसका आशय है - ज्ञान । अत: वेद शब्द का अर्थ होता है - ज्ञान की राशि या ज्ञान का संग्रह-ग्रंथ । भारतीय परम्परा के अनुसार ईश्वरीय प्रेरणा से जो ज्ञान ऋषियों के मानस में उदय हुआ एवं उन ऋषियों ने अपने तप तथा ध्यान के बल से जिसका साक्षात्कार किया वही वेद है । मंत्रों के रूप में वही संसार के सामने अभिव्यक्त हुआ । भारतीय संस्कृति को जानने के लिए हम वेद वेदांगों का अध्ययन कर रहे हैं क्योंकि इनके अध्ययन के बिना हम भारतीय संस्कृति की कल्पना भी नहीं कर सकते ।

वैदिक मंत्र ऋषियों के पुत्रों एवं शिष्यों की कुल परम्परा में सुरक्षित होते रहे । ब्रह्मचारी शिष्य अपने आचार्यों तथा अन्य पूज्य लोगों से सुन- सुनकर वैदिक मंत्रों का अध्ययन तथा ग्रहण करते थे । इसलिए वेद का नाम 'श्रुति'

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19
UGC Approval Number 63012

अर्थात् 'सुनी हुई बात' भी है । इन ऋषिकुलों का वैदिक विद्यागृहों के कार्य के परिणाम स्वरूप मंत्रों की प्रभूत सामग्री विशाल राष्ट्रीय काव्य-संग्रह के रूप में थी ऋग्वेद संहिता का जन्म हुआ एवं समयानुसार साम, यजु तथा अथर्व अन्य तीन संहिताएं भी अपने रूप में आई । भारतीय परम्परा में इस कार्य का श्रेय वेदव्यास को दिया जाता है।

अनेक दृष्टियों से वेदों को महत्त्वपूर्ण माना गया है ।[2] संकेतरूप में कुछ तथ्य दिए जा रहे हैं :-

वेद आर्यधर्म की आधारशिला है । धर्म के मूलतत्त्वों को जानने के एकमात्र साधन वेद हैं । वेदोऽखिलो धर्ममूलम् ।[3] मनु ने वेदों को सारे ज्ञानों का आधार मानकर उन्हें 'सर्वज्ञानमय' कहा है। महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य के प्रारंभ में ब्राह्मण के लिए वेदध्ययन ही परमतप है । जो ब्राह्मण वेदाध्ययन न करके अन्य शास्त्रों में रूचि रखता है, वह इस जन्म में ही सपरिवार शूद्र की कोटि में है ।

वेद भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत है । भारतीय संस्कृति का यथार्थ ज्ञान वेदों और वैदिक वाङ्मय से ही प्राप्त होता है । प्राचीन समय में वस्तुओं के नाम आदि तथा मानव के कर्त्तव्यों का निर्धारण वेदों से ही किया गया था । सर्वेषां तु नामानि, कर्मणि च पृथक् पृथक्। वेदशब्देभ्य एवादौ, पृथक् संस्थाश्च निर्ममे ।[4] लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने वेदों की प्रमाणिकता को मानना ही आर्यत्व एवं हिन्दुत्व का मुख्य लक्षण बताया है।

'सर्वज्ञानमयो हि स:' कहकर मनु ने वेदों को सभी विद्याओं का स्त्रोत माना है । वेदों में दार्शनिक सिद्धान्त, राजनीति शास्त्र, समाजशास्त्र, अध्यात्मवाद, जन्तुविज्ञान, प्रोद्योगिकी, वृष्टिविज्ञान, अर्थशास्त्र, नाट्यशास्त्र, काव्यशास्त्र, मनोविज्ञान, आयुर्वेद, गणित, भौतिकी, रसायनशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, कामशास्त्र और विविध कलाओं का लाखों मंत्रों में वर्णन है। वेद मानवमात्र के कर्त्तव्य-बोध के लिए सबसे उत्तम प्रमाणित धर्मग्रंथ हैं। इनमें कर्त्तव्याकर्त्तव्य का यथास्थान विस्तृत वर्णन और प्रतिपादन है ।वेदों में मानवीय सम्बन्धों की पावनता, विचारों का आदान-प्रदान जैसे - गुरु-शिष्य, पिता-पुत्र, पति-पत्नी, माता-पिता, समाज और व्यक्ति, राष्ट्र और राष्ट्रीयता, विश्वबन्धुत्व, परोपकार, उद्योग, दान-पुण्य, सत्कर्म एवं अतिथि- सत्कार आदि का विस्तृत विवरण किया गया है।

प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति तथा समाज का विशद चित्रण वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है । ऋग्वेद और अथर्ववेद में तत्कालीन समाज और सभ्यता का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है । यजुर्वेद में 60 अधिक व्यवसायों का उल्लेख मिलता है । व्यवसायों से संबद्ध जातियों के नाम तथा उनके कर्मो का भी वर्णन है । ब्राह्मण आदि के कर्त्तव्यों का वर्णन संक्षेप में किया गया है । ब्राह्मण का कर्त्तव्य है ज्ञानार्जन, क्षत्रिय का रक्षा-कार्य, वैश्य का व्यापार-वाणिज्य और शूद्र का शिल्प एवं श्रमसाध्य सेवा कार्य ।

ब्रह्मणे ब्राह्मणम्, क्षत्रायराजन्यम्, मरुद्भ्यो वैश्यम्, तपसे शूद्रम् ।[5]

वेदों में प्राचीन अर्थव्यवस्था का भी विराट दर्शन होता है । वेदों में जीवन से जुड़ी, कृषि, आदान-प्रदान की व्यवस्था, व्यापार और वाणिज्य का स्वरूप, विविध धातुएँ, नाप-तोल के साधन, प्रचलित मुद्राएँ, विविध शिल्प, अन्न वस्त्र आदि का क्रय-विक्रय, ऋणदान आदि से संबद्ध सामग्री प्राप्त होती है । व्यापार में सफलता के लिए दो गुणों की आवश्यकता बताई गयी है । वे हैं 1. चरित्र : चरित्र की शुद्धि एवं व्यवहार-कुशलता । 2.उत्थित : श्रम, दृढ़ निश्चय और उत्साह । अर्थशास्त्र का मूलमंत्र है - आदान-प्रदान, लेन-देन । यजुर्वेद के निम्नलिखित मंत्र में इसका सुन्दर प्रतिपादन है ।

(क) शुनं नो अस्तुचरितमुत्थितं च ।[6]

निहारं च हरासि मे, निहारं नि हराणि ते ॥[7]

वेदों में राजनीतिशास्त्र से संबद्ध सामग्री भी बहुलता से उपलब्ध है । इनमें विशेष उल्लेखनीय विषय हैं - राज्य की उत्पत्ति के सिद्धान्त, राज्य का स्वरूप उद्देश्य और कार्य, राज्य के विविध अंग, राजा का निर्वाचन, राजा के कर्त्तव्य, संविधान और विधिनिर्माण, विविध शासन-प्रणालियाँ, गुप्तचर-व्यवस्था, सैन्य व्यवस्था, अर्थव्यवस्था, कर-निर्धारण, शस्त्रास्त्र आदि । प्रजा के कर्त्तव्य आदि का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि वह राष्ट्र की रक्षा के लिए सदा

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

जागरूक रहे । सारांश में कहा जा सकता है कि शासनतन्त्र का विवेचन हमें उस समय की शासन पद्धति का ज्ञान प्रदान करता है ।

वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिता: स्याम ।[8]

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु ।[9]

संसार के विद्वानों ने स्वीकार किया है कि विश्व वाङ्मय में ऋग्वेद ही सबसे प्राचीनतम ग्रंथ है । भाषा वैज्ञानिक अध्ययन करके तुलनात्मक भाषा विज्ञान का विकास हुआ है ।वैदिक भाषा ग्रीक, लेटिन, अवेस्ता आदि से तुलनात्मक अध्ययन करके भाषाओं के विकास की परम्परा का ज्ञान होता है ।

वेदों में अनुप्राप्त, यमक, रूपक, अतिशयोक्ति, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का अनेक मंत्रों में प्रयोग प्राप्त होता है। जैसे - यमक का प्रयोग, कविभिर्निर्मितां मिताम् । ऋग्वेद के उष:सूक्त में उषा का एक सुन्दरी के तुल्य अपने वस्त्रों को चारों और फैलाती है ।

स्वर्जनन्ती सुभगा सुदेंसा आन्ताद् दिव: पप्रथ आ पृथिव्या: ।[10]

उषा एक प्रेमिका के रूप में वर्णन करते हुए कहा गया है कि यह सूर्य रूपी पति से मिलने के लिए मुस्कुराती हुई और अपने वक्ष:स्थल को अनावृत करती हुई सूर्य की ओर जाती है।

संस्यमाना युवति: पुरस्ताद् आविर्वक्षासि कृणुते विभाती ।[11]

जैसे कि पहले वर्णन किया गाय है कि वेदों में भौतिकी, रसायनशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, जन्तुविज्ञान, गणितशास्त्र, पर्यावरण, दृष्टि से सहस्त्रों मन्त्र विद्यमान है । श्री मधुसूदन ओझा, गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, मोतीलाल शास्त्री, डॉ॰ वासुदेवशरण अग्रवाल आदि विद्वानों ने वेदो में विद्यमान वैज्ञानिक तत्त्वों की ओर ध्यान आकृष्ट किया। डॉ॰ वे॰ के॰ वर्मा ने भौतिक विज्ञान की दृष्टि से वेदों का अध्ययन किया । महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों को सभी सत्त्व विद्याओं का स्त्रोत बताया है । डॉ॰ डी॰ डी॰ मेहता और आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री ने वेदों में विविध विज्ञानें का विस्तृत वर्णन किया है । डॉ॰ वी॰ जी॰ रेले ने वैदिक देवों को जीवविज्ञान के तत्त्वों के रूप में प्रतिपादित किया है।

शतपथ ब्राह्मण ग्रंथ में ऋग्, यजु:, साम और अथर्व उन चारों वेदों के अध्ययन का अनन्त पुण्य बताया गया है । सारी पृथ्वी के दान से भी बढ़कर प्रतिदिन वेद के अध्ययन का महत्त्व बताया है । इससे योगक्षेम, प्राण, ऐश्वर्य, अन्न समृद्धि आदि की प्राप्ति का उल्लेख किया है ।

यावन्तं ह इमां पृथवीं वित्तेन पूर्णां ददत् लोकं जयति, त्रिस्तावन्तं जयति, भूयांसंचाक्षव्य्यम्, य एवं विद्वान् अहरह: स्वाध्ययमधीते । तस्मात् स्वाध्यायोऽध्येतव्य: ।[12]

वेदों के ज्ञान के लिए सहायक ग्रंथों को वेदांग कहा गया है । वेदांगों में भी भारतीय संस्कृति के पूर्ण रूप से दर्शन होते हैं । ये वेदों के व्याकरण, यज्ञों के कालनिर्धारण, शब्दों के निर्वचन, मंत्रों की पद्यात्मक रचना, यज्ञिय क्रियकलाप का सांगोपांग विवेचन एवं मंत्रों के उच्चारण आदि विषयों में संबद्ध है । वेदांग छ: है : 1. शिक्षा, 2. व्याकरण, 3. छन्द, 4. निरुक्त, 5. ज्योतिष, 6. कल्प

शिक्षा व्याकरणं छन्दो निरुक्तं ज्योतिषं तथा ।

कल्पश्चेति षडङ्गानि वेदस्याहुर्मनीषिण: ॥

ये वेदांग सामान्यता सूत्रशैली में लिखे गए है । इन षड्विध वेदांगों का सामान्य तथा संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैं -

शिक्षा :

"स्वरवर्णाद्युच्चारणप्रकारो यत्र शिक्ष्यते उपदिश्यते सा शिक्षा ।" अर्थात जिसके द्वारा हमें वैदिक मंत्रों के शुद्धातिशुद्ध उच्चारण का ज्ञान होता है, उन्हें शिक्षा के नाम से जाना जाता है । इसे वेदरूपी पुरुष का घ्राण बताया गया है - "शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य ।" तैत्तिरीय उपनिषद् में शिक्षा के 6 अंगों का उल्लेख है । ये हैं : वर्ण, स्वर, मात्रा, बल, साम और संतान । वर्ण:, स्वर:, मात्रा, बलम्, साम, सन्तान:, इत्युक्त:, शिक्षाध्याय: ।[13]

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

व्याकरण :

'व्याकरण' वह वेदाङ्ग है, जो पदों की प्रकृति तथा प्रत्यय का उपदेश देकर पदों के स्वरूप का परिचय कराता है- "व्याक्रियन्ते शब्दः, अनेनेति व्याकरणम् ।" इसे वेदरूपी पुरुष का मुख स्वीकार किया गया है - "मुखं व्याकरणं स्मृतम् ।" ऋग्वेद 4/58/6 में व्याकरण को एक वृषभ के रूप में स्थापित किया गया है । पाणिनि कृत अष्टाध्यायी व्याकरण का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है जिसमें वैदिक और लौकिक दोनों प्रकार की भाषा के नियमों को लिपिबद्ध किया गया है । संसार के किसी भी देश में पाणिनि के व्याकरण जैसा परिपूर्ण और संक्षिप्त ग्रंथ नहीं मिलता । इससे चार हजार सूत्रों में सब संज्ञा शब्द और धातुओं का पूरा विचार किया गया है ।

निरूक्त : वैदिक शब्द समूह का नाम निघंटु है । निघंटु के शब्दों को व्युत्पत्ति तथा व्याख्या निरुक्त का प्रतिपाद्य विषय है । केवल यास्क मुनि का निरूक्त ही मिलता है । भाषाशास्त्र की दृष्टि से निरुक्त का बहुत महत्त्व है । इसमें शब्द के मूल का ज्ञान दिया जाता है । इसमें अर्थविज्ञान की अनेक विधाओं का समावेश है । शब्द के अर्थ का किस प्रकार विकास होता है, किस प्रकार एकार्थक शब्द अनेकार्थक हो जाते हैं और विभिन्न अर्थों वाले शब्द एकार्थक हो जाते हैं । यास्क का 'निरुक्त' ग्रंथ ही संप्रति उपलब्ध है । इसमें 12 अध्याय हैं ।अन्त में परिशिष्ट के रूप में 2 अध्याय हैं । इस प्रकार ये 14 अध्यायों में विभक्त है ।

जिन ग्रंथों में यज्ञ के प्रयोगों की कल्पना या समर्थन किया जाय, उन्हें कल्प के नाम से जाना जाता है - "कल्प्यनते सामर्थ्यन्ते यज्ञ-यागादि-प्रयोगाः यत्र इति कल्पः ।" इसी को दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि - वेद में विहित कर्मों का क्रमपूर्वक व्यवस्थित कल्पना करने वाला शास्त्र, कल्प कहलाता है - "कल्पो वेदविहितानां कर्म-णामनुपूर्वेण कल्पनाशास्त्रम् ।" इस प्रकार कल्पशास्त्र को वेदपुरुष का हाथ स्वीकार किया गया है - "हस्तो कल्पोऽथपठ्यते ।" विषय की दृष्टि से कल्पसूत्रों को निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभक्त किया गया है - 1. श्रौतसूत्र 2. गृह्यसूत्र, 3. धर्मसूत्र तथा 4. शुल्बसूत्र ।

छन्द :

"छन्दः पादौ तु वेदस्य" अर्थात 'छन्दवेदांग' को वेदपुरुष के पादों के रूप में स्वीकार किया गया है । वेद के मंत्र, गायत्री त्रिष्टुभ्, जगती आदि विभिन्न छन्दों में रचे गए हैं । इनमें नियमों की व्याख्या वैदिक छन्द शास्त्र का विषय है । पिंगल मुनि कृत छन्द-सूत्र इसका मुख्य ग्रंथ है जिसमें वैदिक तथा लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों का विवेचन है । नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरतमुनि के अनुसार - "छन्दहीनो न शब्दोऽस्ति, न छन्दः शब्दवर्जितम् ।"

ज्योतिष :

यज्ञों तथा शुभ कार्यो के लिए विशेष काल तथा विशेष मुहूर्त का निर्धारण और नियम ही ज्योतिष का प्रतिपाद्य विषय था । इसके अनेक ग्रंथ बने किंतु उनमें से अल्प संख्या में उपलब्ध हैं । इनमें वेदांग ज्योतिष, आर्चज्योतिष तथा याजुस् ज्योतिष उपलब्ध है ।

भारतवर्ष सुसंस्कारों से भरा महान देश है । किसी भी देश में एक जैसी स्थिति नहीं रहती उनमें उतार-चढ़ाव वृद्धि और ह्रास चलते रहते हैं । परंतु उनकी सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु वह जीवनी शक्ति है जो सब समय अटूट रहकर राष्ट्र को जीवित रखती है वही शक्ति संस्कृति कहलाती है । संसार में सभ्यताएँ पैदा हुई संस्कृतियों का निर्माण हुआ और काल के शक्तिशाली हाथों में पड़कर विलुप्त हो गई । केवल भारतीय संस्कृति की धारा ही इन सब परिस्थितियों में अविनाशी रही अक्षुण्ण रही । यह आज भी जीती जागती वस्तु है जो बीते हुए इतिहास की जड़वस्तु नहीं बन पाई । इसी कारण यह आज भी शाश्वत है । इसकी बाह्य स्थिति बेशक बदल जाये परंतु भारतीय मानस की जीवन धारा नष्ट नही हो सकती । प्रश्न उठता है कि संस्कृति क्या वस्तु है संक्षेप में संस्कृति उन संस्थाओं और तत्त्वों का नाम है, जिनका निर्माण राष्ट्र ने किया । यह संस्कृति भूतकाल में जन्म लेकर काल क्रम से यह हम तक पहुँची है इसका कुछ अंश जीर्ण हो जाता है और कुछ इसमें नया जुड़ जाता है अधिकांश पहले का ही बढ़ता रहता

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

है यही प्रत्येक संस्कृति के प्रवाह का क्रम है । संस्कृति मनुष्य की सच्ची धारा माता है । क्योंकि वेद भारतीय संस्कृति की आत्मा है । वेद वेदांगों के अध्ययन के बिना हम भारतीय संस्कृति की कल्पना नहीं कर सकते ।

वैदिक साहित्य की मुख्य धाराऐं :

वैदिक साहित्य को सुविधा की दृष्टि से चार भागों में बांटा जाता है: 1. वेदों की संहिताएं 2. ब्राह्मण ग्रंथ, 3. आरण्यक ग्रंथ 4. उपनिषद्।

वैदिक संहिताएँ :

वेदों की चार संहिताएँ हैं : ऋग्वेद संहिता, यजुर्वेद संहिता, सामवेद संहिता और अथर्ववेद संहिता । संहिता का अर्थ है पर : संनिकर्षः संहिता ।[14] पदों की संधि आदि द्वारा समन्वित रूप । व्याकरण की दृष्टि से प्रयोग के योग्य पद-समूह को संहिता कहा जाता है । इस दृष्टि से मंत्र भाग को संहिता कहते हैं ।

चार वेदों के अनुसार यज्ञ में चार ऋत्विक् (ऋत्विज्) होते हैं : होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा । होता यज्ञ में ऋग्वेद की ऋचाओं का पाठ करता है अतएव ऋग्वेद को होतृवेद भी कहते हैं। अध्वर्यु यजुर्वेद के मंत्रों का पाठ करता है । यही यज्ञ भी करता है और यज्ञ में घृत आदि की आहुति देता है । उद्गाता सामवेद के मंत्रों का गान करता है । ब्रह्मा यज्ञ का संचालन करता है वही यज्ञ का अधिष्ठाता और निर्देशक होता है । ऋग्वेद के एक मंत्र में चारों ऋत्विजों के कर्मो का निर्देश है ।

ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उ त्वः ।[15]

वैदिक वाङ्मय का दो भागों में विभाजन :

वर्ण्य विषय की दृष्टि से समस्त वैदिक वाङ्मय को दो भागों में बांटा जाता है - 1. कर्मकाण्ड, 2. ज्ञान काण्ड । वेदों और ब्राह्मण ग्रंथों को कर्मकाण्ड के अंतर्गत रखा जाता है क्योंकि इनमें विविध यज्ञों के कर्मकाण्ड की पूरी प्रक्रिया दी गई है । वेदों में यज्ञीय कर्मकाण्ड से संबद्ध मंत्र है और ब्राह्मण ग्रंथों में उनकी विस्तृत व्याख्या है । ज्ञान काण्ड के अंतर्गत आरण्यक ग्रंथ उपनिषदें हैं । आरण्यक ग्रंथों में यज्ञिय क्रिया कलाप की आध्यात्मिक एवं दार्शनिक व्याख्या प्रस्तुत की गई है । इसी आध्यात्मक व्याख्या को आधार बनाकर उपनिषदों की सृष्टि हुई है । उपनिषदों में आध्यात्मिक और दार्शनिक तत्त्वों की समीक्षा की गई है । इनमें ब्रह्मा, ईश्वर, जीव, प्रकृति, मोक्ष आदि का वर्णन है ।अतएव आरण्यक और उपनिषदों को ज्ञान काण्ड कहा जाता है।

अष्ट-विकृतियां :

वेद के मंत्रों के उच्चारण में तथा उनकी सुरक्षा में कोई अन्तर ना आवे इसे इसके लिए अनेक उपाय अपनाए गए थे, इन उपायों को विकृतियां कहते थे । इनमें मंत्रों के पदों को घुमा फिरा कर अनेक प्रकार से उच्चारण किया जाता था । ये विकृतियां 9 है । इनके नाम है 1. जटा-पाठ, 2. माला, 3. शिखा, 4. रेखा, 5. ध्वज, 6. दण्ड, 7. रथ, 8. घन । इनमें घन पाठ सबसे कठिन और बड़ा होता है ।

जटा माला शिखा रेखा, ध्वजो दण्डो रथो घनः ।
अष्टौ विकृतयः प्रोक्ताः, क्रमपूर्वा महर्षिभिः ॥

तीन अन्य पाठ :

उपरोक्त आठ विक्रतियों के अतिरिक्त तीन पाठ और हैं : संहिता पाठ, पदपाठ और क्रमपाठ । वेदों की सुरक्षा के इन उपायों में से छः प्रकार मुख्य थे । तदनुसार यहां इनके उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

संहिता पाठ - इसमें मंत्र अपने मूल रूप में रहता है ।

पादपाठ :

इसमें मंत्र के प्रत्येक पद को पृथक करके पढ़ा जाता है । यदि कोई संधि है तो उस संधि को तोड़ दिया जाता है । प्रत्येक पद अपने स्वतंत्र रूप में रहेगा । यदि संहिता पाठ में चार पदों को क,ख,ग,घ कहेंगे तो पदपाठ में इन्हें क, ख, ग, घ कहेंगे ।

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

क्रमपाठ – इसमें पदों का यह क्रम रहता है कख, खग, गघ ।

जटा-पाठ – इसमें पदों का यह क्रम रहता है कख, खक, कख । खग, गख, खग ।

शिखापाठ – इसमें पदों का यह क्रम रहता है – कख, खक, कखग । खग, गख, खगघ ।

घनपाठ – इसमें पदों का यह क्रम रहता है कख, खक, कखग, गखक, कखग । उदाहरण के रूप में यहां संहिता पाठ और पदपाठ आदि दिये जा रहे हैं।

संहितापाठ – ओषधयः सं वदन्ते सोमेन सह राज्ञा ।

पदपाठ – ओषधयः सम् । वदन्ते । सोमेन । सह । राज्ञा ।

क्रमपाठ – ओषधयः सम् । सं वदन्ते । वदन्ते सोमेन । सोमेन सह । सह राज्ञा । राज्ञेति राज्ञा ।

जटा-पाठ – ओषधयः सम्, सम् ओषधयः, ओषधय सम् । सं वदन्ते, वदन्ते सम्, सं वदन्ते इत्यादि ।

यास्क का सिद्धांत पक्ष :

आचार्य यास्क ने पूर्वापक्ष में उठाए गएउपर्युक्त प्रश्नों का उत्तर बहुत सुन्दरता से दिया है । यास्क का मन्तव्य है कि मंत्र सार्थक हैं, जैसे लोकभाषा के शब्द । प्रश्नों के क्रमशः उत्तर ये हैं :

1. लौकिक भाषा में भी निश्चित क्रम वाले प्रयोग मिलते हैं, जैसे – इन्द्राग्नी, पितापुत्रौ । इसमें क्रम नहीं बदला जा सकता ।
2. मंत्रों का विनियोग ब्राह्मण ग्रंथों के वाक्यों से किया जाता है, यह विनियोग 'उदितानुवाद' है अर्थात् कथित का स्पष्टीकरणमात्र है ।
3. 'ओषधि रक्षा करे' यह अनुचित नहीं हैं । इसमें व्यक्ति की यह भावना निहित है कि उस्तरे से बालक को कोई हानि न पहुंचे । यह वाक्य भावनात्मक प्रयोग है ।
4. रुद्र एक होते हुए भी अनेक हैं । रुद्र एक महाशक्तिशाली देवता है । उसकी शक्ति का विस्तार ही अनन्तता है । यह रूपकात्मक वर्णन है ।
5. मंत्रों से निर्देश अनवश्यक नहीं है । लोकव्यवहार में भी ऐसा होता है । अभिवादन के समय अपना नाम लेते हैं, यद्यपि वह व्यक्ति आपका नाम पहले से जानता है । जानते हुए को भी मधुपर्क देते समय कहा जाता है कि – मधुपर्क लीजिए ।
6. एक ही पदार्थ का नाना रूप में वर्णन लोक में भी होता है । अदिति की सर्वव्यापकता को बताने के लिए उसे सब कुछ कहा गया है। अदिति ही द्युलोक, अंतरिक्ष आदि सभी रूपों में है । जैसे लोक भाषा में कहते हैं – जल जीवन है, जल में सारे रस हैं ।
7. मंत्रों के अर्थ स्पष्ट नहीं हैं । कोशग्रंथ आदि से उनका अर्थ जानना चाहिए । अतएव शिक्षित और अशिक्षित में अन्तर होता है । ज्ञानी-अज्ञानी में यही अन्तर है । यास्क ने चुटकी लेते हुए कहा है कि यदि कोई अन्धा व्यक्ति ठूंठ से ठोकर खाकर गिर पड़ता है तो यह उस ठूंठ का दोष नहीं, यह पुरुष का दोष है । अर्थ अस्पष्ट है तो यह आपके अल्प ज्ञान का फल है ।

नैष स्थाणोरराधो यदेनमन्धो न पश्यति । पुरुषापराधः स भवति ।[16]

वेदों के गूढ अर्थो को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न आचार्यो ने विभिन्न पद्धतियां अपनाई हैं । इनका संक्षिप्त परिचय यहां प्रस्तुत किया जा रहा है ।

1. आचार्य यास्क :

आचार्य यास्क प्रथम आचार्य है, जिन्होंने वेदों की व्याख्या के लिए आवश्यक नियमों का निर्देश किया है । प्रायः सभी परवर्ती आचार्यो ने यास्क के निर्देशों का पालन किया है । वेदों की व्याख्या करते समय इन नियमों का पालन करना चाहिए :

क. मंत्रों की व्याख्या प्रकरण के अनुसार ही करनी चाहिए, पृथक् से नहीं ।[17]

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

ख. मंत्रों की व्याख्या परम्परागत पद्धति के ज्ञान से करनी चाहिए । साथ ही उसमें तर्क या युक्तिसंगतता होनी चाहिए, अर्थात् वेदार्थ में परंपरागत अर्थ का ज्ञान आवश्यक है । वह युक्तिसंगत होना चाहिए ।[18]

ग. वेदों में कुछ गूढ अर्थ छिपे हुए है, आर्षदृष्टि से या कठिन परिश्रम से जाना जा सकता है ।[19]

घ. मंत्रों के तीन प्रकार के अर्थ होते है - आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक ।[20]

ङ. मुख्य रूप से मंत्रों का प्रतिपाद्य एक परमात्मा ही है । विभिन्न गुणों और कर्मो के आधार पर उसके ही अन्य देवतावाचक नाम है ।[21] अर्थात् अग्नि, इन्द्र, मित्र, वरुण आदि नाम उस परमात्मा के ही हैं।उसकी विभिन्न शक्तियों के वाचक ये नाम है ।[22]

च. परंपरागत अर्थ का ज्ञान आवश्यक है ।[23] परंपरागत अर्थ जानने वाले को 'प्रारोवर्यवित्' कहते थे ।

छ. वेदार्थ बहुत गूढ है, अत: वेद की व्याख्या में बहुत सावधानी अपेक्षित है । प्रयत्नपूर्वक गूढ अर्थ को स्पष्ट करना चाहिए ।[24]

आचार्य यास्क ने अपने समय में प्रचलित सभी व्याख्या-पद्धतियों का उल्लेख किया है । इनमें वैयाकरण, याज्ञिक, ऐतिहासिक, नैरुक्त, आध्यात्मिक व्याख्या वाले आदि मुख्य है । सायण उवअ महीधर आदि ने इन्हीं पद्धतियों का आश्रय लिया है । इनकी व्याख्या के केन्द्र में प्रधान रूप से यज्ञिय-प्रक्रिया रही है।

2. आचार्य सायण :

वेदों की व्याख्या आचार्यो में आचार्य सायण का स्थान आरण्यक है । वे अकेले ही ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने सभी वेदों तथा ब्राह्मण-ग्रंथों आदि की भी व्याख्या की । जिन्होंने परम्परागत शैली को अपनाया है तथा यज्ञ-प्रक्रिया को सर्वत्र प्रधानता दी है । उन्होंने ब्राह्मण ग्रंथों और सूत्रग्रंथों आदि को आधार बनाया है । निरुक्त की व्याख्या को भी अपनाया है। स्थान-स्थान पर आध्यात्मिक और दार्शनिक व्याख्या भी की है । वे वेदों में इतिहास मानते हैं । वेदों को अपौरुषेय और नित्य मानते हैं । लौकिकइतिहास मानने के कारण स्वामी दयानन्द जी ने इनकी कटु आलोचना की है । पाश्चात्य विद्वानों का आक्षेप है कि परवर्ती शंकराचार्य आदि द्वारा प्रतिपादित अद्वैत-सिद्धान्त आदि का वेदों की व्याख्या में उल्लेखकाल-विपर्यस्तता है ।

कई आलोचकों ने सायण की बहुत आलोचना की है कई दोष निकाले है, परंतु मैक्समुलर, विल्सन, गेल्डनर आदि सायण के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं और मानते हैं कि सायण के भाष्य के आधार पर ही वैदिक वाङ्मय में उनकी गति हो सकी है । वस्तुत: पाश्चात्य जगत् को वेदों का ज्ञान देने वाले आचार्य सायण ही हैं ।

3. स्वामी दयानन्द सरस्वती :

आर्यसमाज के संस्थापक, महर्षि दयानन्द सरस्वती आधुनिक युग में वेदों के पुनरुद्धारक माने जाते है । उन्होंने नैरुक्त-प्रक्रिया का आश्रय लेकर वेदों की नई व्याख्या प्रस्तुत की है । उन्होंने शुक्ल यजुर्वेद संपूर्ण की संस्कृति और हिन्दी में व्याख्या की है । ऋग्वेद की व्याख्या मंडल 7 के 80 सूक्त तक ही सके । आकस्मिक निधन से ऋग्वेद-भाष्य पूरा नहीं हो सका । महर्षि दयानन्द के मन्तव्य एवं भाष्य की मुख्य विशेषताएं ये है:

वेद ईश्वरीय ज्ञान है । उसमें सभी विद्याओं के सूत्र विद्यमान है।

वेद अपौरुषेय है, किसी ऋषि आदि की कृति नहीं है । ऋषियों ने मंत्रों का साक्षात्कार किया है उनका प्रचार किया है, अत: वे विभिन्न मंत्रों के ऋषि कहे जाते है ।

वेदों में नित्य इतिहास है, लौकिक इतिहास नही ।

वेदों के मंत्र केवल यज्ञ-विषयक नहीं है, अपितु इनके विविध उपयोग है ।

वेदों में विभिन्न देवों के नाम रूढ़ या व्यक्ति-विशेष वाचक न होकर यौगिक है । देववाचक शब्द विभिन्न गुणों के बोधक है, अत: उन गुणों से युक्त राजा, विद्वान, सेनापति आदि भी उनके अर्थ हो सकते हैं।

वेदों में विविध विज्ञान से संबद्ध सूत्र उपलब्ध है ।

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

वेदों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं नैतिक विषयों का भी समावेश है । वेदों में केवल धार्मिक शिक्षा ही नहीं है अपितु भौतिक विज्ञान, आयुर्वेद, गणितशास्त्र एवं अन्य विज्ञानों से संबंध सूत्र विद्यमान है।

वेद और भारतीय विद्वान :

वैदिक वाङ्मय के संरक्षण, भाष्य एवं व्याख्या के निमित्त प्राचीनकाल में तथा आधुनिक समय में विशेष प्रयत्न हुआ है । उसका संक्षिप्त विवरण यहां प्रस्तुत किया जा रहा है । इस विषय में विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि वैदिक वाङ्मय की उन्नति में आधुनिक समय में राजा राममोहन राय द्वारा स्थापित 'ब्रह्मसमाज' और स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित 'आर्यसमाज' ने विशेष सक्रिय कार्य किया है । ब्रह्मसमाज का ध्यान भारतीय गौरव की रक्षा के लिए उपनिषदों की ओर रहा है और आर्यसमाज ने वैदिक साहित्य पर विशेष बल दिया है । वर्तमान समय में वैदिक साहित्य पर जो कुछ कार्य हुआ है और हो रहा है, उसमें आर्यसमाज का स्थान अग्रगण्य है।

प्राचीन आचार्य :

वेदों में गूढ अभिप्राय समझाने के लिए कई विधियाँ अपनायी गयीं । इसमें मुख्य ये हैं । 1. पदपाठ, 2., ब्राह्मणग्रंथ, 3. आरण्यक, 4. उपनिषद् 5. वेदांग ।

1. पदपाठ :

वेदार्थ को समझने के लिए मंत्रों के विभिन्न पदों को पृथक्-पृथक् स्वरसहित रखना । इससे संज्ञा, क्रिया, उपसर्ग आदि ठीक-ठीक बोध होता है तथा प्रत्येक पद का अर्थ समझने में सुविधा होती है ।

2. ब्राह्मणग्रंथ :

ये वेदों के व्याख्यान ग्रंथ हैं । इनमें ये प्रतिपादित किया गया है कि यज्ञ की किसी विधि के लिए किस मंत्र का प्रयोग होगा तथा यज्ञविधि का क्या क्रम होगा । ब्राह्मणग्रंथों में मंत्रों की आध्यात्मिक व्याख्या भी की गई है।

3. आरण्यकग्रंथ:

ये वेदों के आध्यात्मिक अर्थ के प्रतिपादक आधार ग्रंथ है ।

4. उपनिषद् :

उपनिषद में वेदों की आध्यात्मिक व्याख्या है । ये भारतीय दर्शन के पूर्वरूप है ।

5. वेदांग :

वेदों के अर्थो के स्पष्ट ज्ञान और प्रयोग के लिए 6 वेदांग ग्रगंथ बनाए गए ।ये व्याकरण, छन्द, निर्वचन, विनियोग और यज्ञादि के मुहूर्तो का स्पष्टीकरण करते है ।

पदकार या पदपाठकार :

1. शाकल्य :

आचार्य शाकल्य ने ऋग्वेद का पदपाठ किया है । ब्रह्माण्ड पुराण में इनको प्रथम शाखाप्रवर्तक कहा गया है। इसके साथ ही रथीतर, बाष्कलि और भरद्वाज को बी शाखाप्रवर्तक कहा गया है ।

शाकल्य: प्रथमस्तेषां तस्मादन्यो रथीतर: ।
बाष्कलिश्च भरद्वाज इति शाखाप्रवर्तका: ॥[25]

यास्क ने निरुक्त में कहीं-कहीं साकल्य के पदपाठ को अस्वीकार भी किया ।

2. रावण :

आचार्य रावण ने भी ऋग्वेद का पाठ प्रस्तुत किया है । कुछ स्थलों पर शाकल्य से पदपाठ भिन्न है । रावण ने ऋग्वेद पर भाष्य भी किया था ।

3. आत्रेय :

इन्होंने तैत्तिरीय संहिता का पाठ किया है । इनका उल्लेख भट्ट भास्कर के भाष्य में तथा बौधायन गृह्यसूत्र (3.9.7) में मिलता है ।

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

4. गार्ग्य :

इन्होनें सामवेद का पदपाठ किया है ।

पदकारों में भी कहीं-कहीं बहुत मतभेद है । जैसे - मेहनास्ति (ऋग् 5.39.1) में शाकल्य ने 'मेहना' को एक पद माना है और गार्ग्य ने 'म, इह, न' तीन पद माने है । यास्क ने दोनों का मत दिया है ।[26]

किसी भी राष्ट्र का निर्माण केवल ईंट, पत्थर या सीमेंट से बने गगनचुम्बी इमारतों से ही नहीं होता । न ही हम भौगोलिक दृष्टता को हम राष्ट्र कह सकते हैं । राष्ट्र में कई चीजों को दृष्टि गोचर किया जाता है। मानव जाति के बिना राष्ट्र की कल्पना करना असंभव है । क्योंकि राष्ट्र के उत्थान के लिए मानव जाति का कर्मशील होना अति अनिवार्य है । मानव के कर्म दर्शन को देखने के लिए हमें उसके प्राणों के दर्शनों की आवश्यकता है । मानव जीव का प्राण उसकी संस्कृति में बसता है । जिस प्रकार से शरीर आत्मा के बिना शवतुल्य होता है और उसी प्रकार संस्कृति के बिना समाज व राष्ट्र निष्प्राण होता है । संस्कृति किसी जिंदगी के किसी एक पहलु को नहीं कहा जा सकता । संस्कृति की आत्मा वेद है । क्योंकि संस्कृति शब्द जीवन के समग्र अभिव्यक्त को कहा जा सकता है । जीवन के मुख्य चार पुरुषार्थ बताए जाते है - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जिन को हम जीवन की आदर्श प्राप्ति मानते हैं । इन चारों पुरुषार्थो को पाने के लिए वेदों में मानव जीवन को चार आश्रमों की जीवन पद्धति प्रदान की । समग्र जीवन को चार आश्रमों ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास की आदर्श शैली को अपनाकर व्यक्ति भूक्ति और मुक्ति दोनों ही अपने जीवन काल में प्राप्त कर सकता है । सामाजिक संस्कृति का सबसे विशिष्ट पहलू है प्रवृत्ति प्रधान कर्म योगात्मकदृष्टिकोण । कर्त्तव्य और कर्म से पूर्ण सांसारिक जीवन सबसे बड़ा आदर्श है ।

संदर्भ :

---

1. मनु॰ 02.7
2. अथर्व, पृ॰ 5
3. मनु॰ 2.6
4. वही, 1.21
5. यजु॰ 30.5
6. अथर्व॰ 3.15.4
7. यजु॰ 3.50
8. यजु॰ 1.23
9. अथर्व॰ 6.87.1
10. ऋग्॰ 3.61.4
11. ऋग्॰ 1.123.10
12. शत॰ ब्रा॰ 11.5.6.3 से 7
13. तैत्ति, उ॰ 1.2
14. अष्टा॰ 1.4.108
15. ऋग् - 10.71.11
16. निरुक्त, 1.16
17. न तु पृथक्त्वेन मन्त्रा निर्वक्तव्यः प्रकरणश एव तु निर्वक्तव्यः । निरुक्त, 13.12
18. अयं मन्त्रार्थचिन्ताऽभ्यूहोऽभ्यूढः । अपि श्रुतितोऽपि तर्कतः । निरुक्त, 13.12
19. न ह्येषु प्रत्यक्षमस्ति, अनृषेरतपसो वा । निरुक्त 13.12

Airo International Research Journal

Volume XIII, ISSN: 2320-3714
January, 2018
Impact Factor 0.75 to 3.19

UGC Approval Number 63012

20. तास्त्रिविद्या ऋचः ..... आध्यात्मिक्यश्च । नि० 7.1
21. महाभाग्याद् देवताया.....स्तूयते । नि० 7.4
22. तासां महाभाग्याद्.....भवन्ति । वही, 7.5
23. परोर्व्यवित्सु तु.....भवति । नि० 1.16
24. गम्भीरपदार्थो वेदः.....दुर्गाचार्य ।
25. ब्राह्मण्डपुराण, पूर्वभाग, द्वितीय पाद अ० 34
26. निरुक्त, 4.4